बाल ठाकरे: एक फासिस्ट जिसकी आत्मा अभी जिन्दा है

17 नवम्बर को मुंबई में शिवसेना के संस्थापक बाल ठाकरे की मृत्यु हो गयी। उसकी मौत के बाद मुंबई में आयोजित बंद पर टिप्पणी करने वाली दो लड़कियों के साथ महाराष्ट्र पुलिस ने जो सलूक किया उसने साबित कर दिया कि भले ही बाल ठाकरे मर गया हो पर उसकी फासिस्ट सोच शिवसैनिकों से लेकर महाराष्ट्र पुलिस-सरकार के रूप में अभी जिन्दा है कि बाल ठाकरे की आत्मा को अभी अस्मशान पहुंचाना बाकी है।

मुंबई की 21 वर्षीया लड़की वाहीन ढाढा का कसूर सिर्फ इतना था कि उसने बाल ठाकरे की मौत के बाद आयोजित बंद पर फेसबुक पर टिप्पणी करते हुए कहा कि हर रोज हज़ारों लोग मरते हैं पर दुनिया चलती रहती है लेकिन एक राजनीतिज्ञ प्राकृतिक मौत मरता है और हर कोई शोक में डूब जाता है उन्हें मालूम होना चाहिए कि हम जबरन सर झुकाये हुए हैं कि अपनी इच्छा से। कितना समय हो गया जब किसी ने शहीद भगत सिंह, आजाद, सुखदेव या अन्य किसी व्यक्ति जिसकी वजह से आज हम स्वतंत्र भारतीय हैं, के प्रति कुछ सम्मान दिखाया हो या दो मिनट का मौन रखा हो। सम्मान निश्चय ही जबरन थोपा नहीं जाता है वो हासिल किया जाता है। आज मुंबई भय के कारण बंद है न कि सम्मान के कारण।

वाहीन ढाढा की सहेली का कसूर तो और कम था उसने तो महज उपरोक्त कमेंट पर पसंद करने पर टिक किया था लेकिन शिवसैनिकों को मुंबई में किसी का इतना जुबान खोलना भी बर्दाष्त नहीं था। उन्होंने पुलिस में शिकायत ही नहीं की बल्कि ढाढा के चाचा डा.अब्दुल यूसुफ ढाढा के क्लीनिक पर तोड़-फोड़ की कार्यवाही भी कर डाली। मुंबई पुलिस ने दोनों लड़कियों को तो गिरफ्तार कर लिया पर तोड़-फोड़ के एक भी आरोपी को पकड़ने की हिम्मत उसमें नहीं थी। प्रारंभ में मुंबई पुलिस ने उन पर धार्मिक भावनाये भड़काने (एस-295 आईपीसी) और संचार माध्यमों से घातक संदेश भेजने (एस-66 ए, आईटी एक्ट)का आरोप लगाया। परंतु बाद में इस गिरफ्तारी पर विरोध शुरू होने पर पहले आरोप को बदलकर वर्गों-समुदायों के बीच विद्वेश फैलाने (एस 505 आईपीसी)का आरोप निर्मित कर दिया। दोनों लड़कियों को रात भर पुलिस हिरासत में रखने के बाद अदालत में पेश किया गया जहां मजिस्टेट की भी उन्हें डीस्चार्य करने वै पुलिस को फटकारने की हिम्मत न हुई और दोनों लड़कियों को जेल भेज दिया। राष्ट्रीय स्तर पर हो हल्ला मचने के बाद ही उन्हें जमानत मिल पायी। परंतु उन्हें मज़बूरन फेसबुक से अपना कमेंट हटा कर खेद व्यक्त करना पड़ा।

मुबई के जिस शिवाजी पार्क में भारी भीड़ के साथ बाल ठाकरे का दाह संस्कार किया गया। आज से लगभग 42 वर्ष पूर्व मुंबई के इसी पार्क में जून 1970 में सीपीआई के विधायक और जुझारू मज़दूर नेता कृष्णा देसाई को 25000 मज़दूरों की भीड़ ने दाह संस्कार किया था 5 जून 1970 को कृष्णा देसाई की शिवसेना के गुण्डों ने हत्या कर दी थी। बाल ठाकरे इस हत्या में सीधे शामिल थे उस समय ऐसी संभावना जताई गयी थी।

कृष्णा देसाई सीपीआई की समर्पणवादी नीति से नाइतफाकी रखते हुए मज़दूरों को शिवसैनिकों से भिड़ने के लिए शारीरिक ट्रेनिंग दिया करते थे। उस समय मुंबई की सूती मिलों में मज़दूरों के

नकली शेर से डरी सियारों की भीड़

बीच कम्युनिस्ट पार्टी का खासा जनावार था। परंतु देसाई की मौत के बाद मज़दूरों के आक्रोष को संसोधनवादी सीपीआई द्वारा संघर्श की ओर दिशा देने के बजाय शांत रहने की दिशा देने से मज़दूर हतोत्साहित हो गये। परिणामस्वरुप देसाई की मौत के बाद हुए विधान सभा चुनाव में यह सीट शिवसेना ने सीपीआई से छीन ली। मज़दूरों की बड़ी आबादी के बीच शिवसेना अपनी पैठ बनाने में कामयाब होती गई।

एक अखबार में कार्टुनिस्ट के बतौर जीवन शुरू करने वाले बाल ठाकरे ने 1966 में शिवसेना की स्थापना की। मराठी लोगों की पहचान, उनके रोजगार आदि के नारे पर शिवसेना ने शुरू से ही महाराष्ट्र में बाहरी लोगों के खिलाफ हमला बोलने की नीति अपनाई। तमिल-गुजराती-केरली दुकानों-संस्थानों पर हमला बोल इन्होंने मराठी लोगों को ही रोज़गार पर रखने की मांग की। तब उसने नारा दिया 'बजाओ पुंगी भगाओ लुंगी'।

कम्युनिस्ट विरोधी, मज़दूर विरोधी इस संगठन ने मज़दूरों को हमेंशा मराठी और मराठी को संगठन ने मज़दूरों को हमेंशा मराठी गैर मराठी के आधार पर बांटने का प्रयास किया। मज़दूरों के बीच से सीपीआई का आधार खिसकाने ने के लिये प्रारंभ में कांग्रेस ने शिवसेना के साथ मोर्चा कायम किया। कृष्णा देसाई की शिवसेना द्वारा हत्या पर बाल ठाकरे ने शिवसैनिकों को बधाई देते हुए कहा कि हम जहां भी कम्युनिस्ट पायें उसकी हत्या से पिछे नहीं रहना चाहिए।

1973 आते-आते शिवसेना मुंबई की सर्वप्रमुख राजनैतिक ताकत बन चुकी थी। इन्दिरा गांधी के शासनकाल में एक मराठी बहुल क्षेत्र बेलगाम को कर्नाटक में दिये जाने के विरोध में शिवसैनिकों ने व्यापक हिंसा अंजाम देते हुए 50 से अधिक लोगों को मौत के घाट उतार दिया। ठाकरे को गिरफ्तार कर लिया गया पर उसकी गिरफ्तारी से हिंसा और बढ़ती चली गयी और ठाकरे को जेल से शांति की अपील करनी पड़ी। इस वक्त तक आते-आते ठाकरे को अहसास हो चुका था कि उसकी औकात महाराष्ट्र पुलिस-कानून से ऊपर हो चुकी है। परिणामत: आगे के जीवन में उसने भारतीय कानून की धज्जियां उड़ाते हुए-विद्वेश फैलाने का कोई मौका नहीं चूका।

1981: अब मराठी लोगों के नाम पर उसकी लड़ाई धीरे-धीरे मुस्लिम विरोधी साम्प्रदायिक राजनीति में बदलती चली गयी। 1989 में इसने हिंदू साम्प्रदायिक पार्टी भाजपा से गठबंधन किया। अयोध्या में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद हुए देशव्यापी दंगों में मुंबई में दंगा कर मुस्लिमों की हत्याओं में शिवसैनिकों ने बड़ी भूमिका निभायी।

1992-93 में मुंबई बम विस्फोटों के बाद हुई मुस्लिम विरोधी हिंसा में इस सेना ने बढ़-चढकर भूमिका निभाई। 1995 में सत्ता मिलने के बाद सरकार का रिमोट कंट्रोल बाल ठाकरे के हाथ में आ गया। बाल ठाकरे कानून से ऊपर पहुंच चुका था। इसका सबूत सिर्फ यह बात है कि उस पर दो दर्जन मुकदमें लादे गये पर एक भी चलाया नहीं गया। अधिकतर वापस ले लिये गये।

उसने इस्लामिक आत्मघाती हमलों के जबाब में हिंदूओं के आत्मघाती बम बनाने की वकालत की। उसकी इस बयानबाजी पर ही उसके खिलाफ कार्यवाही के नाम पर इतना हुआ कि उस पर 1999 में 6 वर्ष तक चुनाव लड़ने या वोट देने का अधिकार छीन लिया गया। इस कार्यवाही से उसे कोई नुकसान नहीं हुआ।

1999 में सरकार से शिवसेना के हटाने के बाद भी मुंबई का रिमोट कंट्रोल बाल ठाकरे के हाथ में रहा। इस रिमोट कंट्रोल का बटन जब भी दबता तो मुंबई को किसी सदमें की ओर धकेल देता। कभी वे मुस्लिमों के खिलाफ दबा तो कभी यूपी-बिहार के मज़दूरों के खिलाफ। वो रोहिंटन मिस्त्री के शिवसेना की आलोचना करनेवाली किताब को पाठ्यक्रम से हटाने के लिये दबा तो पाक क्रिकेट टीम भारत आने के खिलाफ भी दबा। आईपीएल में पाक खिलाड़ी लिये जाने के पक्ष में बयान के लिये शाहरूख खान के खिलाफ जब यह दबा तो मुंबई के सिनेमाघरों से शाहरूख की फिल्में हट गयी।

2006 में शिवसेना में फूट हो गयी। बाल ठाकरे के भतीजे राज ठाकरे ने महाराष्ट्र नव निर्माण सेना का गठन कर बाल ठाकरे के असली वारिस होने का दावा पेश कर दिया। उसकी विभाजनकारी-हिंसक कार्यवाही लगातार बढ़ती गयी। परंतु चुनाव में विभाजित शिवसेना का लाभ उठा कांग्रेस सत्तासीन होने में सफल हो गयी। परंतु कांग्रेस भी मुबई का रिमोट बाल ठाकरे के हाथ से छीनने की जुर्रत न कर सकी। मुंबई बालठाकरे के रिमोट कंट्रोल से आजाद होना चाहती है। परंतु अभी वो आजाद नहीं हुई है। वो रिमोट उद्धव या राज ठाकरे के बीच पड़ा है। देखने की बात यह है की कौन उसे पहले उठा लेता है।

बाल ठाकरे की मौत पर नेताओं मनमोहन सिंह, मोदी, आडवाणी के साथ अरविंद केजरीवाल तक षोक में डूबे हैं तो फिल्म इंडस्ट्री भी षोकाकुल है। सारे नेता-अभिनेता निर्देषक उसके घर का चक्कर काटने में जुटे हैं। बिड़ला-अंबानी भी पीछे नहीं हैं। पर मुंबई व देश के मज़दूरों को यह समझ में नहीं आता कि वे किस बात का शोक करें।

उसकी नज़र में तो मज़दूरों का एक दुश्मन, मज़दूरों को आपस में लड़ाकर पूंजीपतियों की सेवा करने वाला चला गया। उसके भाई-बंधु मोदी-मनमोहन-अंबानी शोक में डुबे हैं। अन्ना केजरीवाल भी बाल ठाकरे की मातमपुर्सी में लगे रहे। मज़दूर तो उन सभी जख्मों को याद कर रहा है जो इस ठाकरे ने उसके चेहरे पर दिये हैं। जाहिर है जख्मों का यह सिलसिला अभी ठाकरे के मरने से खत्म नहीं हुआ है उसकी फासिस्ट आत्मा अभी जिंदा है वो राज-उद्धव ठाकरे-मोदी के रूप में जिंदा है। उस फासिस्ट आत्मा को अस्मशान घर पहुंचाने की लड़ाई अभी लम्बी है मज़दूर इसकी तैयारी में जुटे हैं और एक दिन वो बाल ठाकरे की इस आत्मा को भी ठिकाने लगा कर ही दम लेंगे।

महिला सशक्तिकरण और अपराध

बॉलीवुड अभिनेत्रियों, राजनेताओं, और कुछ कंपनियों के बड़े अधिकारियों व सरकारी पदों के शीर्ष पर विराजमान महिलाओं को दिखाकर, भारतीय पूंजीवादीसरकार जब अपने शेयर सूचकांक के ऊपर उठने को पूरे देश का विकाश कह सकती है तो चंद महिलाओं को दिखाकर सशक्तिकरण कहकर अपनी पीठ थपथपाये तो क्या आश्चर्य है। भले ही गरीब की थाली से भोजन गायब होता जा रहा हो। महिलाओं के मामले में भी यह अपने वर्ग व शासन का हिस्सा बन रही महिलाओं के विकास को पूरी महिला आबादी के विकास का पर्याय बना देता है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं।

पूंजीवादी सशक्तिकरण के रंगबिरंगे-खुशबूदार धुंये को हटाकर जब हम जमीनी हकीकत को देखते हैं तो तस्वीर बहुत भयानक है। हम रोज ही अपने आस-पास महिलाओं के खिलाफ बड़े अपराधों को देख-सुन रहे हैं। इन घटनाओं को यदि हम ध्यान रखकर पूरे देश की महिलाओं की स्थिति पर सोचते है तो मन घृणा व क्रोध से भर उठता है। विभिन्न सरकारी-गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा इस हालत को बयां करते हुए आंकड़े प्रस्तुत किये गये हैं। जो भारतीय पूंजीवादी व्यवस्था के औचित्य पर गंभीर सवाल खड़े कर देते हैं। महिलाओं के आर्थिक तौर पर सशक्तिकरण की बात करें तो इसमें भारत 115 वें नम्बर में आता है। यह श्रीलंका बंगलादेश जैसे छोटे व आर्थिक स्थिति में तुलनात्मक तौर पर कमजोर देशों से भी पिछड़ा है। यह तथ्य भारत में महिलाओं को रोज़गार की स्थिति को बयां कर देता है। भारतीय पूंजीवादी व्यवस्था आजादी के इतने साल बीत जाने के बाद भी महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त नहीं कर पायी है। आजादी कें बाद से साल-दर-साल इस व्यवस्था ने महिलाओं के खिलाफ़ अपराधों को बढ़ाया है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की रिपोर्ट बताती है कि महिलाओं के खिलाफ़ होने वाले अपराध की घटनाएं जहां 2004 में 7.3 प्रतिशत व दर 1.5 थी यह साल-दर-साल बढ़ते-बढ़ते 2011 में घटनाएं 59.9 प्रतिशत व 34.9 प्रतिशत हो गयी। इन अपराधों में पति द्वारा पीटे जाने से लेकर अपहरण-हत्या-बलात्कार शामिल है।

2011 में कुल मिलाकर 23,25,575 अपराधों में से महिलाओं के खिलाफ़ होने वाले अपराध 2,19,142 है यानि 9.4 प्रतिशत। गौरतलब है कि ये आंकड़े पुलिस थानों में दर्ज शिकायतों के आधार पर हैं और हम जानते हैं कि थानों में जब शिकायत करने जाते हैं तो पुलिस का रवैया शिकायत ना लिखने का रहता है। महिलाओं के खिलाफ़ अपराधों को तो आम तौर पर लोक-लाज के चलते घर-परिवार वाले खुद ही दबा देना चाहते हैं। महिलाओं के मामले में पीड़ित महिला को ही दोषी समझा जाता है। हरियाणा में हालिया बलात्कारों की घटनाओं में पीड़ित भी महिला थी और उसके कपड़े पहनने, मोबाइल रखने, देर तक बाहर रहने शादी देर से करने सरीखी बातें कहकर दोष भी उसके ही सिर मढ़ दिया गया। यह कहने वाले कोई सामान्य लोग नहीं थे बल्कि राजनेता, धार्मिक संस्थाएं, बुद्धिजीवी व विभिन्न आयोगों के सदस्य थे। यानी पूंजीवादी व्यवस्था का लगभग पूरा अमला था। पूंजीवादी व्यवस्था अपनी कानून की किताब में लिख देने भर से सोचती है कि समाज में बराबरी आ जायेगी। पूंजीवादी व्यवस्था अपने संविधान में स्त्री-पुरुष की बराबरी 1950 में ही लिख चुकी है किन्तु आज तक इस बराबरी के लिए महिलाएं तरस रही हैं। पूंजीवाद द्वारा उसके लिखे जनवाद को हासिल करने के लिए आज आवश्यक बन गया है कि मेहनतकश स्त्री-पुरुष इस पूंजीवादी निजाम के खिलाफ ही संघर्ष का बिगुल बजा दें।